पाठ्यक्रम - ९

९ अ निर्भय बनाने वाली भावना- बारह अनुप्रेक्षा

किसी वस्तु अथवा परिस्थिति के विषय में बार-बार चिन्तन करना अनुप्रेक्षा है। वैराग्य रूप परिणामों को उत्पन्न करने के लिए अनुप्रेक्षा माता के समान मानी गई है।

अनुप्रेक्षा बारह होती हैं, इन्हें बारह-भावना भी कहा जाता है, इनके नाम क्रमशः

१. अनित्य भावना, २. अशरण भावना, ३. संसार भावना, ४. एकत्व भावना, ५. अन्यत्व भावना, ६. अशुचि भावना, ७. आस्रव भावना, ८. संवर भावना, ९. निर्जरा भावना, १०. लोक भावना, ११. बोधि दुर्लभ भावना और १२. धर्म भावना हैं।

1. अनित्य अनुप्रेक्षा - अनित्य का अर्थ नष्ट होने वाला, नाशवान। धन-परिवार आदि समस्त वैभव बिजली की चमक के समान क्षणभंगुर है, इन्हें कितना भी स्थायी रखने का प्रयास किया जाए ये स्थिरता को प्राप्त नहीं होते हैं। यौवनावस्था कुछ ही समय पश्चात् बुढ़ापे में परिवर्तित हो मृत्यु में ढल जाती है।

भावना का फल- इस प्रकार संसार, शरीर, भोगों की अनित्यता का चिंतन करने पर, अशुभ कर्मोदय से इष्ट वस्तुओं का वियोग होने पर, अनिष्ट वस्तुओं का संयोग होने पर मन संताप को प्राप्त नहीं होता, शरीर आदि पर पदार्थों की क्षणभंगुरता का ज्ञान होने से उनमें घमंड, मद पैदा नहीं होता, पर पदार्थों के प्रति राग भाव कम होता है। मोह की शृंखला टूट जाती है।

2. अशरण अनुप्रेक्षा - अशरण का अर्थ सहारा देने वाला नहीं। माता-पिता आदि परिजन, धन-सम्पत्ति, मंत्र-तंत्र, रागी-द्वेषी, देवी-देवता कोई भी मृत्यु से इस जीव को बचाने वाला नहीं है। बड़े-बड़े शक्तिशाली महापुरुष भी काल के गाल में समा गए।

भावना का फल- अतः इस संसार में कोई भी हमारा रक्षक नहीं हैं, ऐसा विचार करते हुए धर्म में बुद्धि लगाना चाहिए। सच्चे देव, गुरु, शास्त्र ही एकमात्र संसार के दुःखों से बचाने वाले हैं, वे ही एक मात्र शरण भूत है ऐसा विचार करना चाहिए।

3. संसार अनुप्रेक्षा - अज्ञान के कारण यह प्राणी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और भव रूप पंचपरिवर्तन कर रहा है। नरक गति में यह जीव निरंतर भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, शस्त्र घात आदि के कष्टों को सहन करता है। तिर्यञ्च गति में यह जीव छेदा-भेदा जाना, बोझा ढोना, एक स्थान पर बंधे रहना इत्यादि अकथनीय सैकड़ों दुःखों को, कष्टों को सहन करता है। मनुष्य गति में इष्ट पुत्रादि के वियोग से उत्पन्न दुःख, संतान का नहीं होना, खोटा पुत्र, कलहकारिणी स्त्री, धनहीनता, विकलांगता आदि नाना दुःखों को भोगता है। देवगति में इंद्रिय भोगों से तृप्त न होता हुआ, दूसरे देवों के वैभव से ईर्ष्या करता हुआ, मरण समय के पूर्व माला मुरझाने पर पीड़ा का अनुभव करता हुआ दुःखी होता है।

भावना का फल- अतः इस संसार में वास्तव में कहीं सुख नहीं है, मोह के कारण यह जीव विषय-भोग से उत्पन्न पीड़ा को ही सुख मान लेता है। ऐसा बार-बार चिंतन करता हुआ जीव सांसारिक विषय भोगों से उदासीन होता हुआ, सच्चे धर्म में प्रवृत्ति करता है।

4. एकत्व भावना - यह जीव अकेला ही जन्मता और मरता है, अकेला ही सारे पुण्य-पाप के फलों को भोगता है, जन्म से साथ रहने वाला शरीर भी अंत समय में यहीं छूट जाता है। यहाँ कोई भी जीवन भर साथ नहीं निभाता, थोड़े दिनों के ये सभी स्वार्थ-वश साथी बने हुए हैं, परगति को जाते समय कोई भी साथ नहीं जाता है।

भावना का फल- ऐसा विचार करता हुआ जीव स्त्री-पुत्रादि से राग भाव को कम करता है, उनके संयोग-वियोग में विशेष हर्ष-विषाद नहीं करता हुआ अपने स्वरूप का विचार करता है। पर निमित्त से अपने परिणामों को नहीं बिगाड़ता हुआ एकत्व/आत्म तत्त्व की आराधना करता है।

5. अन्यत्व अनुप्रेक्षा - मेरा यह परिवार, शरीर, मकान आदि वैभव ये सब मुझसे अत्यन्त भिन्न/अलग हैं। मैं चेतन स्वभाव वाला ज्ञानी हूँ अन्य सब पुद्गल जड़ स्वभाव वाले, अज्ञानी हैं।

इस प्रकार चिंतन करने से शरीरादि से राग भाव कम होता, पर के वियोग से उत्पन्न तनाव कम होता है, क्योंकि जो अपना है ही नहीं उसके अभाव में क्यों दु:खी होना।

6. अशुचि अनुप्रेक्षा – यह शरीर अत्यन्त अपवित्र है, गंदा है, घिनावने पदार्थ मल-मूत्र, पीव खून आदि को उत्पन्न करने वाला है, शुक्र शोणित से बना हुआ है। दुर्जन के समान स्वभाव वाले इस शरीर से मूर्ख लोग ही प्रीति रखते हैं।

इस प्रकार अशुचि भावना का चिंतन करने पर शरीर के प्रति राग भाव कम होता है, विषय-वासनाओं से मन दूर हट जाता है, रूप, बलादि का मद उत्पन्न नहीं होता हैं। रत्नत्रय के प्रति प्रीति उत्पन्न होती है।

7. आस्त्रव अनुप्रेक्षा – कर्मों का आना आस्त्रव है। पाँच मिथ्यात्व, बारह अविरति, पन्द्रह योग और पच्चीस कषाय मुख्य रूप से आस्त्रव के कारण हैं। आस्त्रव इहलोक और परलोक दोनों में दु:खदायी है, इस प्रकार आस्त्रव के दोषों का चिंतन करना चाहिए।

ढोल बजा के बोल

ढोल बजा के बोल कि बाबा मेरा है।
जोर-जोर से बोल कि बाबा मेरा है।।
कोई बोलो बड़ा कोई बोले छोटा।
बाबा है अनमोल कि बाबा मेरा है।।
ताली बजा के बोल कि बाबा मेरा है।
कोई बोले उत्तर कोई बोले दक्षिण।।
कोई बोले पूरब कोई बोले पश्चिम।
वो तो है चहुँओर कि बाबा मेरा है।
कोई बोले मोटा कोई बोले पतला।
बाबा गोल मटोल कि बाबा मेरा है।
जोर-जोर से बोल कि बाबा मेरा है।
ढोल बजा के बोल कि बाबा मेरा है।।

अत: कछुए के समान इंद्रिय को वश में रखना चाहिए। समता भाव धारण कर, मोह-आकुलता का त्याग करना चाहिए।

8. संवर अनुप्रेक्षा – कर्म जिस द्वार से आ रहे हैं, उस द्वार को बंद कर देना सो संवर है। आत्म उत्थान के हेतु पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति, दस प्रकार के धर्म का पालन करना चाहिए एवं बाईस परीषह सहन करना चाहिए। बारह भावनाओं का निरन्तर चिंतन करना चाहिए। यह संवर ही स्वर्ग एवं मोक्ष को देने वाला है, संवर सहित तप ही मुक्ति का कारण है। ऐसा विचार कर मोक्ष पुरुषार्थ में मन को स्थिर करना चाहिए।

9. निर्जरा अनुप्रेक्षा – आत्मा के साथ बंधे हुए कर्मों का एक देश झड़ना, थोड़ा-थोड़ा अलग होना निर्जरा है। वह निर्जरा दो प्रकार की है :- सविपाक निर्जरा और अविपाक निर्जरा। पहली निर्जरा चारों गतियों में जीवों के कर्मोदय होने पर होती है, इससे मोक्षमार्ग संबंधी कोई कार्य संभव नहीं। दूसरी अविपाक निर्जरा से ही संसार परिभ्रमण मिटता है एवं मोक्ष दशा प्राप्त होती है। इस प्रकार निर्जरा भावना का चिंतन करते हुए कर्म निर्जरा हेतु उद्यम करना चाहिए।

10. लोक भावना –चौदह राजू प्रमाण ऊँचा पुरुषाकार यह लोक है जिसमें जीवादि छह द्रव्य रहते हैं, इसकी लम्बाई – चौड़ाई आकार आदि के विषय में चिंतन करना लोक भावना है। चतुर्गति युक्त यह लोक एकमात्र दु:ख का हेतु होने के कारण छोड़ने योग्य है ऐसा विचार करते हुए निज स्वरूप में लीन होना चाहिए।

11. बोधि दुर्लभ भावना – मोक्ष सुख के साधनभूत रत्नत्रय (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र) का प्राप्त होना बोधि कहलाता है, इस बोधि की दुर्लभता के विषय में चिंतन करना बोधि दुर्लभ अनुप्रेक्षा है। तप की भावना, समाधि मरण और अंत में मोक्ष सुख की उपलब्धि अत्यन्त दुर्लभ है। ऐसा चिंतन करते हुए प्राप्त अवस्था की दुर्लभता को समझते हुए आगे-आगे पुरुषार्थ करना चाहिए।

12. धर्म अनुप्रेक्षा – संसारी प्राणियों को दु:ख से उठाकर, उत्तम सुख में जो धरता है, उसे धर्म कहते हैं। इस संसार में धर्म को छोड़कर अन्य कोई सच्चा मित्र नहीं है, धर्म की आराधना से ही दु:खों से छुटकारा, मोक्ष सुख की प्राप्ति संभव है। अत: ऐसा चिंतन करते हुए पाप कार्यों को छोड़ना चाहिए एवं धर्म में बुद्धि लगाना चाहिए।

संस्मरण – चित्र की सीख चित्र यदि सही-सही आकार प्रकार ले लेता है, तो चित्त के परिवर्तन का कारण बन सकता है। चित्त का परिवर्तन ही जीवन की सही चित्रकारी है। जब बालक विद्याधर स्कूल में पढ़ते थे, उस समय वे चित्रकला भी सीखा करते थे। तब चित्र बनाना तो पूरा आता था, लेकिन नाक का नक्सा बिगड़ जाता था। बचपन के चित्रकार आचार्य विद्यासागर जी महाराज आज वीतरागता के चलते फिरते जीवंत तीर्थ का निर्माण कर रहे हैं। जो जिनशासन की न केवल नाक अपितु संपूर्ण अंगों की बेहतर चित्रकारी कर दिग्दिगन्त तक प्रभावना कर रहे हैं।

पाठ्यक्रम - ९

९ ब जैन विद्वान परिचय

जैन शासन में ऐसे अनेक कवि और लेखक हुए हैं, जो श्रावक पद का अनुसरण करते हुए राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, जातीय एवं आध्यात्मिक भावनाओं की अभिव्यक्ति में पूर्ण सफल हुए। जिन तथ्य या सिद्धान्तों को श्रुतधर, सारस्वत, प्रबुद्ध और परम्परा पोषक आचार्यों नेआगमिक शैली में विवेचित किया है, उन तथ्य या सिद्धान्तों की न्यूनाधिक रूप में अभिव्यक्ति कवि और लेखकों द्वारा भी की गई है। अत: कुछ विद्वानों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को इस लेख में प्रस्तुत किया जा रहा है।

महाकवि धनञ्जय

१. ईसा की सातवीं-आठवीं शताब्दी के लगभग (१२०० वर्ष पूर्व) द्विसंधान महाकाव्य के प्रणेता परम जैन कविराज धनञ्जय का जन्म हुआ था। इनकी माता का नाम श्री देवी, पिता का नाम वसुदेव तथा गुरु का नाम दशरथ माना गया है।

२. जीवन की प्रमुख घटना - जिस समय आपके इकलौते पुत्र को सर्प ने डस लिया था, उस समय आप जिन-पूजा में लीन थे। घर से समाचार आने पर भी आप जिन-पूजा में लीन रहे। तब धर्मपत्नी ने मूर्च्छित पुत्र को लाकर पति के सामने डाल दिया। पूजा से निवृत्त होकर, जिन-भक्ति के प्रभाव स्वरूप, तत्काल विषापहार स्तोत्र की रचना प्रारंभ की, रचना पूर्ण होते-होते पुत्र के शरीर का विष पूर्णत: उतर गया और वह निर्विष होकर खड़ा हो गया। चारों ओर जैन धर्म की जय-जयकार गूंज उठी तथा धर्म की अभूतपूर्व प्रभावना हुई।

३. आपने द्विसन्धान महाकाव्य, विषापहार स्तोत्र एवं धनञ्जय नाममाला ऐसे प्रधानत: तीन ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखे।

महाकवि आशाधर जी

१. ईसा की तेरहवीं शताब्दी के लगभग (७०० वर्ष पूर्व), वि.सं. १२३०-३६ के लगभग दिगम्बर जैन परम्परा में संस्कृत भाषा के अद्वितीय विद्वान प. आशाधर जी का जन्म हुआ था। आप माण्डलगढ़ (मेवाड़) के मूल निवासी थे। इनके पिता का नाम सल्लक्षण एवं माता का नाम श्रीरत्नी था।

२. आशाधर जी का अध्ययन बड़ा ही विशाल था। इनके विद्यागुरु प्रसिद्ध विद्वान पण्डित महावीर थे। वे जैनाचार, आध्यात्म, दर्शन, काव्य, साहित्य, कोष, राजनीति, कामशास्त्र, आयुर्वेद आदि सभी विषयों के प्रकाण्ड विद्वान पण्डित थे। स्वयं गृहस्थ रहने पर भी बड़े-बड़े मुनि और भट्टारकों ने इनके ज्ञान की अपेक्षा शिष्यत्व स्वीकार किया था।

३. पण्डित आशाधर जी के तीन ग्रन्थ मुख्य हैं और सर्वत्र पाये जाते हैं। जिनयज्ञ कल्प, सागार धर्मामृत और अनगार धर्मामृत।

महाकवि बनारसी दास

१. ईसा की सोलहवीं शताब्दी (४०० वर्ष पूर्व) संवत् १६४३ में हिन्दी साहित्य के महाकवि बनारसी दास जी का जन्म एक धनी परिवार में हुआ था। इनके पिता खड़गसेन जवाहारात के व्यापारी थे। पुत्र के जन्म का नाम विक्रमाजीत था, काशी के पण्डित ने

अमृत के बदले जहर

एक इंस्पेक्टर स्कूल का निरीक्षण करने गया। निरीक्षण कर स्कूल की रिपोर्ट लिखी। सभी क्लासें अनुशंसित हैं और सभी कार्य समय पर किए जाते हैं। पढ़ाने का ढंग अध्यापकों का ठीक है। बच्चे होशियार हैं। स्कूल में साफ-सफाई है। लेकिन जैसा होना चाहिए वैसा नहीं है। मात्र इस वाक्य ने ऊपर लिखे सभी वाक्यों पर पानी फेर दिया। वैसे ही भाव पूर्वक भगवान की पूजा की, तीर्थ वंदना की, व्रत-उपवास किए, उसके बदले थोड़ी इच्छा कर ली तो जैसे कि रावण ने विद्याधर की विभूति देखी थी और यह भावना कर ली कि मेरे तप का फल यही मिले। इसके समान ही वैभव सम्पन्न होऊँ। वह तो ऐसा हुआ कि जैसे गर्दभ के बदले हाथी को बेच दिया और राख के लिए चंदन को जला दिया। अत: धर्म कर हमारी इतनी-सी चाह भी अमृत को जहर रूप में परिवर्तित कर देती है।

उनका नाम बनारसी दास रखा।

२. कवि जन्मना श्वेताम्बर - साम्प्रदाय के अनुयायी थे। आध्यात्म ग्रंथ समयसार एवं गोम्मटसार ग्रन्थ को पढ़कर व सुनकर बनारसी दास जी दिगम्बर साम्प्रदाय के अनुयायी बन गए। बनारसी दास जी के नाम से निम्नलिखित रचनाएं प्रचलित है। नाममाला, समयसार नाटक, बनारसी विलास, अर्द्धकथानक, महाविवेक युद्ध, नवरस पद्यावली।

पं. टोडरमल

१. आचार्य कल्प प. टोडरमल जी का जन्म वि.सं. १७९७ को जयपुर में हुआ था। पिता का नाम जोगीदास और माता का नाम रमा या लक्ष्मी था। इनके गुरु का नाम बंशीधर जी मैनपुरी बतलाया जाता है।

२. टोडरमल जी बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे, गुरु जी इन्हें स्वयंबुद्ध कहते थे। वे व्याकरण के सूत्रों को गुरु से भी स्पष्ट व्याख्या करके सुनाते थे। छह माह में ही इन्होंने जैनेन्द्र व्याकरण को पूर्ण कर लिया था।

३. टोडरमल जी की कुल ११ रचनाएं हैं, जिनमें सात टीका ग्रन्थ और चार मौलिक ग्रन्थ हैं। मौलिक ग्रन्थ १. मोक्षमार्ग प्रकाशक, २. आध्यात्मिक पत्र, ३. अर्थ संदृष्टि, ४. गोम्मट सार पूजा।

टीका ग्रन्थ :-

- गोम्मट सार(जीवकाण्ड)
- गोम्मट सार (कर्मकाण्ड)
- लब्धिसार टीका
- क्षपणासार वचनिका
- त्रिलोकसार टीका
- आत्मानुशासन (वचनिका)
- पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय - इस ग्रन्थ की टीका अधूरी रह गई थी जिसे पण्डित दौलतराम कासलीवाल जी ने पूर्ण की।

गोखले की सत्यनिष्ठा

एक शिक्षक ने कक्षा के सभी विद्यार्थियों को कुछ सवाल घर से करके लाने के लिए दिए। दूसरे दिन शिक्षक ने सभी की कापियाँ देखीं तो केवल एक विद्यार्थी के सवाल सही निकले। शिक्षक उस विद्यार्थी को पुरस्कार देने लगे। उसने पुरस्कार तो लिया नहीं, उलटे रोने लगा। शिक्षक को बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने रोने का कारण पूछा।

विद्यार्थी ने हाथ जोड़कर नम्रता से कहा, सर! आपने तो यह समझा होगा कि इन सवालों के जवाब मैंने अपनी बुद्धि से निकाले हैं किन्तु सच यह नहीं है। इन सवालों में मैंने अपने एक मित्र की मदद ली है। अब आप ही बताइए कि मैं पुरस्कार पाने लायक हूँ या दण्ड पाने लायक।

यह सुनकर शिक्षक बहुत प्रसन्न हुए और उसके हाथ में पुरस्कार देते हुए कहा-अब यह पुरस्कार मैं तुम्हें तुम्हारी सत्यनिष्ठा के लिए देता हूँ।

सच बोलने वाला यही बालक देशभक्त गोपाल कृष्ण गोखले के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

समाधि भावना

दिन-रात मेरे स्वामी, मैं भावना ये भाऊँ।
देहान्त के समय में तुमको न भूल जाऊँ॥
शत्रु अगर कोई हो, संतुष्ट उसको कर दूँ।
समता का भाव धरकर, सबसे क्षमा कराऊँ॥१॥

त्यागूँ आहार पानी औषध विचार अवसर।
टूटे नियम न कोई दृढ़ता हृदय में लाऊँ॥२॥

जागें नहीं कषाएँ, नहीं वेदना सतावे।
तुमसे ही लौ लगी हो, दुर्ध्यान को भगाऊँ॥३॥

आतम स्वरूप अथवा, आराधना विचारूँ।
अरहंत सिद्ध साधु, रटना यही लगाऊँ॥४॥

धर्मात्मा निकट हों, चर्चा धर्म सुनावें।
वह सावधान रक्खें, गाफिल न होने पाऊँ॥५॥

जीने की हो न वांछा, मरने की हो न इच्छा।
परिवार मित्र जन से, मैं मोह को हटाऊँ॥६॥

भोगे जो भोग पहले, उनका न होवे सुमरन।
मैं राज्य-संपदा या पद इन्द्र का न चाहूँ॥७॥

रत्नत्रय का हो पालन, हो अंत में समाधि।
'शिवराम' प्रार्थना यह, जीवन सफल बनाऊँ॥८॥

.....

सुख के ५ भेद : (१) इन्द्रिय सुख : जिसे सुखाभास कहते हैं, जो राजा-महाराजाओं को, इंद्रों को, साता वेदनीय कर्म के उदय से होता है। (२) सहज सुख : चतुर्थ गुणस्थान से मोक्षमार्गी जीवों को होता है। (३) अतीन्द्रिय सुख : जो निर्विकल्प समाधिस्थ मुनिराजों को होता है। (४) अनंत सुख : जो अर्हन्त परमेष्ठी के होता है। (५) अव्याबाध सुख : जो सिद्धों के होता है।

विद्याष्टकम्

सुविद्यावारीशो गणधरसमो ज्ञानचतुरः।
विधाता शिष्याणां शुभगुणवतां शास्त्रकुशलः॥
पुराणानां ज्ञाता नयपथचरो नीतिनिपुणः
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ १॥

अर्थ : (**सुविद्यावारीशः**) श्रेष्ठ विद्याओं के समुद्र हैं, (**गणधरसमः**) गणधर के समान (**ज्ञानचतुरः**) ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं में दक्ष हैं, (**शुभगुणवतां**) अच्छे गुणकारी (**शिष्याणां विधाता**) शिष्य समुदाय के प्रमुख हैं, (**शास्त्रकुशलः**) समस्त शास्त्रों में कुशल हैं, (**पुराणानां ज्ञाता**) प्राच्य विद्याओं के मनीषी हैं, (**नयपथचरः**) अनेकान्तवाद के अनुयायी हैं और (**नीतिनिपुणः**) नीति-निपुण हैं, (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

मुमुक्षुर्ब्रह्मज्ञः सरलहृदयः शान्तकरणः।
स्वशिष्याणां शास्ता शुभगुणधरः सिद्धगणकः॥
सुयोगी धर्मज्ञः सरलसरलः कर्मकुशलः।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ २॥

अर्थ : (**मुमुक्षर्बह्मज्ञः**) जो परम श्रेष्ठ पद मोक्ष के अभिलाषी हैं, आत्म-तत्त्व के मर्मज्ञ हैं, (**सरलहृदयः**) जिनका हृदय अत्यन्त सरल है, (**शान्तकरणः**) शान्त परिणामी हैं, (**स्वशिष्याणां शास्ता**) अपने शिष्यों संघ के जो अनुशासक, नियंत्रक, प्राचार्य हैं, (**शुभगुणधरः**) प्रशस्त गुणों के धारक हैं, (**सिद्धगणकः**) उत्कृष्ट साधक तपस्वियों में अग्रगण्य हैं, (**सुयोगी**) मन-वचन-काय पर समान रूप से नियंत्रक, सुयोगी है, (**धर्मज्ञः**) धर्म के मर्मज्ञ हैं, (**सरलसरलः**) अतिशय सरल हैं, (**कर्मकुशलः**) आचार्यपद के दायित्वों के सम्पादन में अत्यधिक कुशल हैं, (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

अहिंसा सत्यार्थी शमदमपरो ज्ञानपथिकः।
मलप्पा - श्रीमन्त्योरजनि जनुषा गौरवकरः॥
प्रविद्यो विख्यातः सुरगुरु - समः वीत-वसनः।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ ३॥

अर्थ : (**अहिंसा सत्यार्थी**) जो अहिंसा और सत्य की उपासना में अहर्निश निरत हैं तथा (**शमदमपरः**) विकारों के शमनकर्ता और इन्द्रिय-विजेता हैं, (**ज्ञानपथिकः**) निरन्तर ज्ञान के मार्ग पर संचरणशील हैं। (**मलप्पा-श्रीमन्त्योरजनि जनुषा गौरवकरः**) जिनके (गृहस्थ अवस्था के पिता एवं माता होने का गौरव) क्रमशः श्री मलप्पा जी (समाधिस्थ मुनि श्री मल्लिसागर जी महाराज) एवं श्रीमंति जी (समाधिस्थ आर्यिका समयमतीजी माताजी) को प्राप्त है, (**प्रविद्यः विख्यातः**) जो विशेषज्ञ मनीषी हैं, विख्यात हैं, (**सुरगुरु-समः**) बृहस्पति के समान ज्ञानवान् हैं, (**वीतवसनः**) दिगम्बर मुद्राधारी हैं, (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

सदालग्गा-ग्रामे यो जनिमवाप्नोच्छारदि-तिथौ।
धरो विद्यायाः यो प्रथित-यशसोऽभूदनुपमः।।
ततो लब्ध्वा ज्ञानं उपनय-विधानस्य विधिना।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः।।४।।

अर्थ : (**सदालग्गा-ग्रामे**) सदलगा ग्राम कर्नाटक में (**यो जनिम-वाप्नोच्छारदि-तिथौ**) जिनका शरद पूर्णिमा की शुभ तिथि में जन्म हुआ और (**यः**) जो (बाल्यावस्था में) (**विद्यायाः धरः**) विद्याधर के नाम से (**प्रथित-यशसोऽभूदनुपमः**) अपूर्व, अनुपम यशस्वी हुए, (**उपनय-विधानस्य विधिना**) उपनयन विधान की विधि से (**ततः**) जिन्होंने (**ज्ञानं लब्ध्वा**) ज्ञान को प्राप्त किया। ऐसे (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

इतो लब्ध्वाऽऽचार्यं ऋषिवर-वरं 'देश'-भणितम्।
व्रतं ब्रह्माख्यं योऽलभत परमं ह्यात्म-रसिकः॥
ततोऽनुज्ञां प्राप्य गतवानसौ ज्ञानजलधिं।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ ५॥

अर्थ : (**इतः लब्ध्या**) ऐसा प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करके (**वरं**) श्रेष्ठ (**आचोर्यं ऋषिवर**) आचार्य ऋषिवर (**देश भणितम्**) देशभूषण महाराज से (**ब्रह्माख्यं व्रतं**) ब्रह्मचर्यव्रत (**योऽलभत**) धारण किया (**परमं ह्यात्म-रसिकः**) उत्कृष्ट

वर्तमान में रहने से सिरदर्द नहीं होता ।

आत्म रसिक (आचार्य-रत्न देशभूषण महाराज) (**ततः अनुज्ञा**) उनकी अनुमति (**प्राप्य**) पाकर (**ज्ञानजलधिं**) आचार्य ज्ञानसागर महाराज के पास (**गतवान् असौ**) पहुँचे। (**भव-भयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

यशस्वी तेजस्वी सरसिजसमो रागरहितः।
यथाभानुर्नित्यं तपति सततं ह्युष्णकिरणः॥
तथैवायं पूज्यस्तपति भवने शुद्धचरणः।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ ६॥

अर्थ : जो (**यशस्वी**) यशस्वी, (**तेजस्वी**) तेजस्वी और (**सरसिजसमो**) कमल के समान (**रागरहितः**) निःस्पृह हैं। (**यथाभानुर्नित्यं**) जैसे सूर्य नित्य (**सततं**) निरंतर (**ह्युष्णकिरणः**) गर्म किरणों से (**तपति**) तपता है, (**तथैवायं**) उसी प्रकार (**पूज्यः**) ये पूज्य आचार्य श्री (**शुद्धचरणः**) अपने शुद्ध आगम-सम्मत आचरण से (**भवने**) सम्पूर्ण संसार में (**तपति**) तपस्यारत हैं। (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

प्रकृत्या सौम्यो यो हिमकरसमः शान्तिचषकः।
सुधीर्वाग्मी शिष्टः शुभगुणधनः शुद्धकरणः॥
महापीठासीनो बहुगुणनिधिर्लोभ - रहितः।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ ७॥

अर्थ : (**यः**) जो (**प्रकृत्या**) स्वभाव से (**सौम्यः**) सौम्य हैं, (**हिमकरसमः**) चन्द्रमा की किरणों की भाँति शीतल हैं, (**शान्तिचषकः**) शान्ति-सुधा-रस के पान करने वाले हैं, (**सुधीः**) उत्कृष्ट कोटि के विद्वान, (**वाग्मी**) वक्ता, (**शिष्टः**) शिष्ट (**शुभगुणधनः**) प्रशस्त गुणों के धारक एवं (**शुद्धकरणः**) निर्दोष चर्या वाले हैं, (**महापीठासीनः**) दिगम्बर जैन-आचार्य के महनीय आसन पर विराजमान हैं, (**बहुगुणनिधिः**) विविध प्रकार के गुणों की निधियाँ जिनके पास हैं और (**लोभ-रहितः**) किसी प्रकार का लोभ जिन्हें स्पर्श भी नहीं कर सका है, (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

क्रोध करने का अर्थ है दूसरों के द्वारा किए अपराध की सजा स्वयं को देना।

सुविद्या वागीशः निजगुरुकृतिक्रान्त-प्रवणः।
मुनीशैः संवन्द्यः विदित - महिमा मंगलकरः॥
चिरञ्जीव्यादेषा भव-भयभृतां मौलिशिखरः।
प्रकुर्यात्कल्याणं भवभयहरो मे गुरुवरः॥ ८॥

अर्थ : जो (**सुविद्या**) प्रशस्त विद्याओं में निपुण हैं, (**वागीशो**) वाणीभूषण हैं, (**निजगुरु**) अपने गुरु आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज के (**कृतिक्रान्त-प्रवणः**) कृतित्व को उजागर करने में प्रवीण हैं, (**मुनीशैः संवन्द्य**) जो मुनिराजों के द्वारा अच्छी तरह वन्दनीय हैं, (**विदित-महिमा**) जिनकी महिमा प्रकट है, (**मंगलकरः**) मंगलकारी है (**चिरञ्जीव्यात्**) चिरकाल तक जीवित रहने वाले (**एषा**) ऐसे (**भव-भयभृतां**) संसार के भय से भरे हुए मानवों में (**मौलिशिखरः**) मुकुट शिखर की भाँति सुशोभित है, (**भवभयहरः**) जन्म, जरा, मृत्यु के भय को दूर करने वाले ऐसे (**मे गुरुवरः**) परम श्रेष्ठ गुरुवर आचार्य विद्यासागरजी मुनि महाराज (**प्रकुर्यात्कल्याणं**) हमारा कल्याण करें।

विद्यासागर आचार्यः प्रथितो भुवनत्रये।
ससंघाय नमस्तस्मै, नमस्तस्मै नमो नमः॥
विद्या सिन्ध्वष्टकमिदं, भक्त्या भागेन्दुना कृतम्।
महापुण्यप्रदं लोकैः प्रपठन् याति सदा सुखम् ॥ ९॥

अर्थ : (**विद्यासागर आचार्यः**) आचार्य विद्यासागर जी महाराज (**भुवनत्रये**) तीनों लोकों में (**प्रथितः**) प्रसिद्ध हैं, उन्हें उनके (**ससंघाय**) सम्पूर्ण संघ के साथ (**नमस्तस्मै**) सादर नमन है, (**नमस्तस्मै नमो नमः**) त्रि-बार नमोऽस्तु।

(**इदं**) यह (**विद्यासिन्ध्वष्टकं**) विद्यासागर अष्टकम् शीर्षक स्तवन (**भक्त्या**) अतिशय भक्तिपूर्वक (**भागेन्दुना**) डॉ. भागचन्द जैन भागेन्दु के द्वारा (**कृतं**) रचा गया है। यह भव्य स्तवन (**लोकैः**) लोक के द्वारा (**महापुण्यप्रदं**) महान् पुण्यप्रदाता है, (**याति**) इसके (**प्रपठन्**) पठन-पाठन से (**सदा सुखम्**) सदा ही सुख सुलभ होते हैं।

''सुनो बेटा!
यही
कलियुग की सही पहचान है
जिसे
'खरा' भी अखरा है सदा
और
सतयुग तू उसे मान
बुरा भी
'बूरा'-सा लगा है सदा।''

नीति अमृत

हाथ देख मत देख लो, मिला बाहुबल पूर्ण।
सदुपयोग बल का करो, सुख पाओ सम्पूर्ण।।१।।
देख सामने चल अरे , दीख रहे अवधूत।
पीछे मुड़कर देखता , उसको दिखता भूत।।२।।
उगते अंकुर का दिखा, मुख सूरज की ओर।
आत्म बोध हो तुरत ही, मुख संयम की ओर।।३।।
हित-मित-नियमित-मिष्ट ही, बोल वचन मुख खोल।
वरना सब संपर्क तज, समता में जा डोल।।४।।
कूप बनो तालाब ना, नहीं कूप मंडूक।
बरसाती मेंढक नहीं, बरसो घन बन मूक।।५।।
हीरा मोती पद्म ना , चाहूँ तुमसे नाथ।
तुम सा तम तामस मिटा, सुखमय बनूँ प्रभात।।६।।
संत पुरुष से राग भी शीघ्र मिटाता पाप।
ऊष्ण नीर भी आग को, क्या ना बुझाता आप।।७।।
लगाम अंकुश बिन नहीं हय गय देते साथ।
व्रत श्रुत बिन मन कब चले , विनम्र करके माथ।।८।।
भले कूर्म गति से चलो, चलो कि ध्रुव की ओर।
किन्तु कूर्म के धर्म को, पालो पल-पल और ।।९।।
खुला खिला हो कमल वह, जब लौं जल सम्पर्क।
छूटा सूखा धर्म बिन, नर पशु में ना फर्क।।१०।।
भू पर निगले नीर में, ना मेंढक को नाग।
निज में रह बाहर गया, कर्म दबाते जाग।।११।।
पेटी भर ना पेट भर, खेती कर नाऽखेट।
लोकतंत्र में लोक का , संग्रह हो भरपेट।।१२।।
सार-सार का ग्रहण हो, असार को फटकार।
नहीं चालनी तुम बनो, करो सूप सत्कार।।१३।।
मात्रा मौलिक कब रही, गुणवत्ता अनमोल।
जितना बढ़ता ढोल है, उतना बढ़ता पोल।।१४।।
दूर दिख रही लाल-सी, पास पहुँचते आग।
अनुभव होता पास का, ज्ञान दूर का दाग।।१५।।
खिड़की से क्यों देखता, दिखे दुखद संसार।
खिड़की में अब देख ले, मिले सुखद साकार।।१६।।
स्वर्ण पात्र में सिंहनी, दुग्ध टिके नाऽऽन्यत्र।
विनय पात्र में शेष भी, गुण टिकते एकत्र।।१७।।
थक जाना ना हार है, पर लेना है श्वास।
रवि निशि में विश्राम ले, दिन में करे प्रकाश।।१८।।
यम दम शम सम तुम धरो, क्रमशः कम श्रम होय।
नर से नारायण बनो, अनुपम अधिगम होय।।१९।।
स्वीकृत हो मम नमन ये, जय-जय-जय-जयसेन।
जैन बना अब जिन बनूँ, मन रटता दि-रैन।।२०।।

संगति का प्रभाव

देखिए, संगति का प्रभाव कि साधक अवस्था में सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र ही मोक्ष का कारण है और राग बंध का कारण है। लेकिन सम्यग्दर्शनादि को भी राग के साथ होने से बंध का कारण कह देते हैं और राग ने संगति की रत्नत्रय की इस अपेक्षा से प्रशस्त राग को भी परम्परा से मोक्ष का कारण कहते हैं।

उदाहरण : दो मित्र थे। एक सरागता का उपासक, दूसरा वीतरागता का उपासक। अब दोनों वीतराग मंदिर में दर्शन करने गए। दोनों ने वीतरागी जिन प्रतिमा को नमस्कार किया तो जो सरागी देवता का उपासक था उसको लाभ हुआ लेकिन कदाचित उनके सरागी मंदिर जाने का प्रसंग बन जाए और वह सोचे कि मेरे मित्र ने मेरे मंदिर में नमस्कार किया था अतः वह भी सरागी प्रतिमा को नमस्कार कर ले तो हानि किसको होगी? वीतरागी देव के उपासक को। इसी प्रकार सम्यग्दर्शनादि ने राग की संगति करी तो वह बंध का कारण कहा गया। और राग ने सम्यग्दर्शनादि की संगति करी तो वह प्रशस्त राग (पुण्य) परम्परा से मोक्ष का कारण कहा गया।

उदाहरण : चार विद्वानों की मंडली में एक मूर्ख बैठा हो तो आप उसे क्या कहेंगे? विद्वानों की मंडली बैठी है। तब क्या वह मूर्ख भी विद्वान हो गया? नहीं। ऐसे ही चार मूर्खों की मंडली में एक विद्वान बैठा हो तो क्या कहेंगे? मूर्खों की मंडली बैठी है। तो क्या विद्वान भी मूर्ख हो गया? नहीं। लेकिन व्यवहार में ऐसा कहा जाता है। ठीक इसी प्रकार मोक्षमार्ग में भी ऐसा कथन होता है।

अभ्यास

अ. प्रश्नों के उत्तर लिखिए –

१. स्पर्शन इंद्रिय किसे कहते हैं। उसके विषय भी बताइए ?
२. तीन इन्द्रिय जीव के कोई चार नाम बताएं ?
३. कमठ और मरुभूति की घटना बताइए ?
४. पार्श्वनाथ भगवान के गर्भ, जन्म एवं मोक्ष कल्याणक की तिथि क्या थी ?
५. सम्यक् चारित्र किसे कहते हैं, उसकी प्राप्ति का क्या उपाय है ?
६. सेठ जी ने चारों बहुओं को क्या काम सौंपा, कैसे ?
७. द्रव्य श्रावक – भाव श्रावक किसे कहते हैं ?
८. वादिराज मुनिराज ने कौन से काव्य की रचना की उसका क्या परिणाम निकला ?
९. वेदनीय कर्म किसे कहते हैं वह कैसे बंधता है ?
१०. चार प्रकार के कर्म बन्ध कौन से हैं समझाइए ?
११. कवि के पुत्र का विष कैसे दूर हुआ ?
१२. चन्द्रगुप्त कौन था उसका अंतिम समय कैसे व्यतीत हुआ ?
१३. संसार अनुप्रेक्षा का क्या स्वरूप है ?
१४. एकत्व भावना भाने का क्या फल है ?
१५. पं. टोडरमल जी का संक्षिप्त परिचय बताइए?

ब. श्लोक एवं छंदों को पूर्ण करें।

१. जीवन के ..... दिखा देना।
२. यदर्चाभावेन ..... भवतु मे।
३. कंचन ..... भण्डारी।
४. हाथ में ..... आएगी।
५. हम न ..... मधुबन ।
६. नमस्कार ..... नहीं है।
७. सर्पो ..... मंगलम।
८. मुनिसूरज ..... पावै ।
९. जागे ..... भगाऊँ।
१०. सार ..... सत्कार ॥

स. परिभाषा लिखें।

१. चक्षु इन्द्रिय
२. रत्नत्रय
३. भावलिंगी साधु
४. नाम कर्म
५. अशुचि अनुप्रेक्षा
६. बोधि दुर्लभ भावना

द. अन्यत्र खोजें, ज्ञान बढ़ाएँ पढें और पढ़ाएँ।

१. द्रव्य इंद्रिय और भाव इन्द्रिय किसे कहते हैं वे कैसी होती हैं ?
२. इन्द्रियों के विषयों को ग्रहण करने की क्षमता कितनी होती है ?
३. एकेन्द्रिय आदि जीवों की उत्कृष्ट एवं जघन्य अवगाहना कितनी है?
४. सुभौम चक्रवर्ती एवं राजा अरविंद की घटना कैसी है ?
५. पार्श्वनाथ भगवान संबंधी कोई १० नई जानकारी बताएँ?
६. तीर्थ क्षेत्र किसे कहते हैं उनके भेद प्रभेद कौन से हैं ?
७. कोई १५ सिद्ध क्षेत्र एवं १५ अतिशय क्षेत्रों के नाम बताएँ?
८. श्री सम्मेद शिखर जी क्षेत्र की विशेषताएँ बताएँ?
९. कुण्डलपुर जी सिद्ध क्षेत्र की कथा किस प्रकार है ?
१०. पं. दौलत राम जी, पं. द्यानत राय जी एवं पं. सुमेरूचन्द्र जी दिवाकर कौन थे, उनकी प्रमुख कृतियों के नाम लिखें?

जब जीवन का अंत हो, मेरे सामने एक संत हो...
मेरे होठों पर अरिहंत हो, महावीर का वह पंथ हो ।
कषायों की आग में जलता जलता आया हूँ ।।
वासना की राह में चलता चलता आया हूँ ।
दु:ख भरी इस यात्रा का सुखद अंत हो ।।
जब जीवन का अंत हो...
तन में जब तक श्वास है, मन में एक विश्वास है ।
मुक्ति की ही प्यास है, पंडित मरण की आस है ।।
तन अचल और मन अमल हो, अब ना कोई द्वंद हो।
जब जीवन का अंत हो...
धर्म में मेरी प्रीत हो, वेदना में जीत हो।
आगम का संगीत हो, प्रभु का नाम गीत हो ।।
साधना के नंदन वन में, भावना बसंत हो ।
जब जीवन का अंत हो...

''उपाय की उपस्थिति ही पर्याप्त नहीं है, उपादेय की प्राप्ति के लिए अपाय की अनुपस्थिति भी अनिवार्य है। और वह अनायास नहीं, प्रयास-साध्य है।'' (पृ. २३०)